साँझ उतरी

ज्ञान भारिल्ल

राजस्थान साहित्य अकादमी (सगम)
उदयपुर

प्रकाशक
राजस्थान साहित्य अकादमी, (संगम) उदयपुर

मुद्रक
जगन्नाथ यादव, केशव आर्ट प्रिंटर्स
हाथी भाटा, अजमेर

प्रथम संस्करण १९६७
मूल्य रु० ५.५० पैसे

प्रकाशकीय

अकादमी का एक नियम है कि पुरस्कृत पाण्डुलिपि को वह प्रकाशित भी करती है। 'साझ उतरी' कविता सग्रह सत्र ६४-६५ मे राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया जा चुका है।

ज्ञान भारिल्ल हिन्दी के लोकप्रिय गीतकारो म से हैं। यद्यपि यह सग्रह पुरस्कृत होने के पश्चात प्रकाशन के लिए स्वीकृत हो गया था तथापि यह अकादमी की प्रकाशन नीति के दूसर त्गैर का एक अग है जिसके द्वारा अकादमी अपने कृतिकारो के स्वतत्र सग्रह पाठको और समीक्षको के लिए प्रस्तुत क्र रही है।

हमे आशा है ज्ञान भारिल्ल की यह कृति हिन्दी के गीति काव्य के प्रेमियो को पसन्द आयगी।

पाठको की राय का स्वागत किया जायगा।

उदयपुर
३० जुलाई '६७

मगल सक्सेना
सचिव

प्रकाशक
राजस्थान साहित्य अकादमी, (सगम) उदयपुर

मुद्रक
जगन्नाथ यादव, केशव आर्ट प्रिन्टर्स
हाथी भाटा, अजमेर

प्रथम सस्करण १९६७
मूल्य रु० ५ ५० पैसे

प्रकाशकीय

अकादमी का एक नियम है कि पुरस्कृत पाण्डुलिपि को वह प्रकाशित भी करती है। 'साझ उतरी' कविता सग्रह सत्र ६४-६५ मे राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया जा चुका है।

ज्ञान भारिल्ल हिन्दी के लोकप्रिय गीतकारो मे से हैं। यद्यपि यह सग्रह पुरस्कृत होने के पश्चात प्रकाशन के लिए स्वीकृत हो गया था तथापि यह अकादमी की प्रकाशन नीति के दूसरे दौर का एक अग है जिसके द्वारा अकादमी अपने कृतिकारो के स्वतन्त्र सग्रह पाठको और समीक्षको के लिए प्रस्तुत कर रही है।

हमे आशा है ज्ञान भारिल्ल की यह कृति हिन्दी के गीति-काव्य के प्रेमियो को पसन्द आयेगी।

पाठको की राय का स्वागत किया जायगा।

उदयपुर
३० जुलाई '६७

मगल सक्सेना
सचिव

• • •

अतीत से भविष्यत् तक
अग्नि-रेखा की भाँति खिंचे
अपनी स्मृतियों और सपनों
के इन्द्रधनु को

वह सिंदूरी सांझ उतरी

उस विधुर वेला मुझे तुम प्रिय बहुत ही याद आए,
जब गगन पर, और मन पर, वह सिंदूरी साँझ उतरी ।

देखता ही रह गया मैं सूर्य का वह बिम्ब जलता,
इस गगन की आँख का वह एक आँसू विवश ढलता,
और फिर मेरे हृदय के दर्द-सा वह तिमिर उमड़ा—
और उमड़ी युग-युगों से मौन मेरी सब विकलता,
क्या करूँ बरबस अगर सब
जग गईं स्मृतियाँ सुनहरी ?—

साँझ के अनुराग की लाली कि जब फैली गगन मे,
स्वप्न सब देखे-अदेखे घिर गए मेरे नयन मे,
और जब घर लौटते उन पाँखियो ने प्रश्न पूछा—
'कौन यह गृहहीन, आवारा भटकता है विजन मे ?'
एक ही उस प्रश्न से, क्या
जिन्दगी मेरी न बिखरी ?

प्राण ! कल भी यह सुहानी साँझ आएगी गगन मे,
प्राण ! कल भी दर्द की रेखा खिचेगी दग्ध मन मे,
इस तरह यह जिन्दगी, वह जिन्दगी, कल्पान्त सारे—
काटने हैं मुझे उस गत एक ही क्षण की जलन मे,
आह ! मेरा भाग्य, मेरी जलन,
मेरी प्यास गहरी।

प्राण ! मन के गगन पर फिर यह सुलगती साँझ उतरी

सघन उदासी

दिन भर तो भटका कर अपने मन को बहला लेता हूँ
किन्तु साँझ की सघन उदासी मुझसे सही नही जाती।

इस आवारा मन के बादल को किस बिजली से बांधू ?
जाने किन-किन वीरानो मे जा-जाकर खो जाता है।
एक निमिष भी मेरा अपना होकर नही ठहरता यह
जाने किस अनजान देश से कोई इसे बुलाता है।
अपने ही मन की विह्वलता की
यह दर्द भरी गाथा—
तुम सुनते हो नही, और से मुझसे कही नही जाती।

तुमने कहा—चाँद को मन दरवाजे से फेर दिया
मैंने मान लिया मेरे मन के तुम ही उजियारे हो,
तुमने कहा—और मैंने तूफानो को पतवार दिए
मैंने मान लिया था तुम ही मजिल, तुम्ही किनारे हो,
अब तुम हीं दुख के सागर मे
जब यह लहर उठाते हो—
राह किसी तट तक जाने की मुझको दीख नही पाती ।

वे जो मेरी और तुम्हारी जनम-जनम की बाते थी
मैं तो भूल नही पाता हूँ, तुमको याद नही आती,
आकाशो पर सपनो की स्याही से लिखी कहानी वह
एक बार सच कहो प्राण ! क्या तुमसे पढी नही जाती
यदि अपनी आत्मा का निश्छल
स्नेह तुम्ही लौटा लोगे—
कैसे और जलेगी मेरे प्राणो की झिलमिल बाती ?

दिन भर तो भटका कर अपने मन को बहला लेता हूँ
किन्तु साँझ की सघन उदासी मुझसे सही नही जाती ।



यह सूनापन

यह सूनापन शायद सबको दुख देता है,
कल शाम किसी की याद किसी को आई, तब—
सिन्दूरी बादल के पीछे सोने का सूरज डूब गया

रह गई रक्त की रेखा बस पश्चिम मे
जो बहुत देर तक जली अकेली उन्मन सी
फिर अधकार का सागर जैसे उफन पड़ा—
घिर गई रात अधियारी, मेरे जीवन सी,
यह अधकार शायद सबको दुख देता है,
कल एक किरण मुझ तक आकर मुस्काई, तब—
सिन्दूरी बादल के पीछे सोने का सूरज डूब गया।

जीवन आरम्भ हुआ तब से जलता आया
क्षण भर भी कभी किसी को छाया मिली नही,
जो प्राणो तक शीतलता की सुवास भर दे
वह सपनो की मधुकली कही भी खिली नही,

शायद यह प्यास अशेष, अनन्त सनातन है,
कल एक भटकती बदली मुझ पर छाई, तब—
सिंदूरी बादल के पीछे सोने का सूरज डूब गया।

कब तक ऐसे ही काल कटेगा, पता नही,
कब जीवन का सपना सच होकर आएगा ?
यह आशा का उफनाता सागर अब मुझको
किस चन्दा की नगरी तक लेकर जाएगा ?

शायद इस इन्तजार का कोई अन्त नही,
कल शाम किसी की दो आँखें भर आईं, तब–
सिंदूरी बादल के पीछे सोने का सूरज डूब गया।

कल शाम किसी की याद किसी को आई, तब—
कल एक भटकती बदली मुझ पर छाई, तब—
कल एक किरण मुझ तक आकर मुस्काई, तब–
सिंदूरी बादल के पीछे
सोने का सूरज डूब गया।
यह सूनापन शायद सबको दुख देता है

•

मेरे मन !

यह हरी घास पर हेम-सावनी सन्ध्या
तू ऐसे मे उदास मत हो, मेरे मन !

कुछ कनक-किरण के साथ खेल ले क्षण भर,
कुछ इन मेघो के साथ झूम ले, गा ले,
यह मौसम जाकर फिर आए कि न आए—
जिन्दगी हवा का झोका, धूम मचाले,

कब, कहाँ रुकी उडते बादल की छाया ?
क्या पता कहाँ ले जाय आयगा जो क्षण !

इस मौसम मे उदास मत हो, मेरे मन ।

ढल गई दुपहरी ग्राग लगाने वाली,
जो बीत चुकी है बात, उसे जाने दे,
यह साँझ सुहानी श्यामल सपनो वाली
ग्राई, इसमे ग्रस्तित्व डूब जाने दे,

यह ठीक कि जीवन उजडा हुग्रा चमन है,
पर ग्रात्मा ने माना कब कोई बधन ?

मत हो उदास, मेरे घायल, सूने मन !

कुछ कम भोगी हो जलन, नही ऐसा तो,
फिर इस क्षण भी क्यो घेरे रहे उदासी ?
ले चूम शीष इस सजल, सान्ध्य-सुषमा का
फिर ग्रागे चल मेरे एकान्त प्रवासी ।

कुछ ग्रौर सफर तय ग्रभी मुझे करना है,
कुछ ग्रौर तपस्या ग्रभी मागता जीवन ।

मत हो, उदास मत हो, मेरे पागल मन !
यह हरी घास पर
हेम-सावनी
सध्या—



रात भर

क्या पता तूने उसे या चाँद को क्या कह दिया—
रात भर मुझसे लिपट रोती रही कल चाँदनी

एक सूनापन हमारे साथ, हमको घेरकर
इस तरह बैठा रहा, जैसे पुराना मीत हो,
एक-सी ही दर्द की हो दास्ताँ जैसे कि, या
एक ही हारी हुई बाजी, सभी की प्रीत हो,

क्या पता तूने किसी की आत्मा की वेणु पर
छेड़ दी सहसा न जाने कौन सी वह रागिनी।

कल सभी कुछ था— खुला आकाश, चंदा, चाँदनी,
दूध मे धोई, दमकती, दिप रही हर-हर दिशा,
और तारो की कनारो को सुनाती लोरियाँ
चल रही थी महकती, बेभान वासन्ती हवा,

सिर्फ एक अभाव था—वह यह कि तुम कुछ दूर थे,
इसलिए मातम मनाकर रह गई कल यामिनी ।

एक आँसू, जो नयन की कोर तक आकर थमे,
ढल न पाए कि तु—ऐसी जिन्दगी का क्या करूँ ?
एक बुझने से दिये की लौ कि जो धुँधुआ रही हो
जल न पाए किन्तु—ऐसी जिन्दगी का क्या करूँ ?

क्या करूँ उस जिन्दगी का जो न खुद ही चल सके—
औ न हो पाए तुम्हारे पन्थ की अनुगामिनी ।



कौन हो तुम ?

इस अंधेरी रात के उस पार—
कौन हो तुम जो बुलाते हो मुझे
तड़पकर, बेचैन, बारम्बार ?

बुझ गया आलोक मेरे पन्थ का
और कोई भी किरन आती नहीं,
इस अंधेरे की उदासी इस कदर
घिर गई आकर कि अब जाती नहीं,

रिक्त है मन-प्राण, केवल वक्ष पर
जल रहे कुछ धधकते अंगार।

कौन हो तुम जो बुलाते हो मुझे
तड़प कर, बेचैन, बारम्बार ?

मत पुकारो दद की ग्रावाज मे
ग्रा नही सकता—कि बीता काल है,
उठ नही सकता किसी के सामने
वेदना का वह कलंकित भाल है,

मत गिराग्रो जो हमारे बीच मे
खिंच गई है शून्य की दीवार।

कौन हो तुम जो बुलाते हो मुझे
तडपकर, बेचैन, बारम्बार ?
इस ग्रंधेरी रात के उस पार—



जीवन भी और मरण भी

यह जलन और अनुराग मेघ-से ऐसे छाये मन पर
जैसे जीवन भी, और मरण भी साथ बरसते आते।

हर साँझ साध्य-तारा आकर मन खींच-खींच ले जाता
उस दूर, बहुत ही दूर—विगत के मधुमय छाया वन मे,
फिर आसमान तक जाकर सहसा भू पर गिर जाता हूँ
निर्मम पीडा सी उठती मेरे वर्तमान के तन मे,
फिर सभी दिशा से जैसे कोई
आँधी सी उठती है—
कल्पना, भावना, स्वप्न—सभी बरबाद तरसते आते।
जैसे जीवन भी और मरण भी,
साथ बरसते आते।

लगता है मेरी तृप्ति स्वयं ही मेरी तृषा बनी है
मैं सब पीता हो जाता, पर फिर भी प्यासा का प्यासा,
सब कुछ है मेरे पास किंतु फिर भी झोली खाली है
अस्तित्व समूचा बोल रहा, पर मौन हो गई भाषा,
यह क्या विडम्बना है मेरे
इस अनुरागी जीवन की—
गाता हूँ, पर सूनेपन जैसे स्वर को, ग्रमते जाते ।
जैसे जीवन भी और मरण भी,
साथ बरसते आते ।

ओ किरन ! जन्म जन्मान्तर से बिछुड़ी मेरी अभिलाषा !
ओ मेरे सत्य शिव-सुन्दरम् ! ओ मेरे सजीवन !
यह देख अंधेरा कैसा विष-सा मेरे मन-प्राणों पर
छाया है, जैसे डूब रहा मेरा अस्तित्व प्रतिक्षण,
तू आ, कि दीप की बाती झिलमिल
बुझने ही वाली है—
ये पीड़ा के तूफान मौत से घिरे, गरजते आते ।
जैसे जीवन भी और मरण भी,
साथ बरसते आते
यह जलन और अनुराग मेघ-से
ऐसे छाये मन पर—

•

जीवन की ढलती वेला में

जीवन की ढलती वेला मे, विदा मागने के इस क्षण,
कोई साथ नही है मेरे, सूनी-सूनी शाम है।

सब खामोश हो गई हैं आवाजें अनगिन अपनो की,
जैसे सहसा मौत हो गई इन्द्रधनुष से सपनो की,
और एक अधियारी चादर
अम्बर से ऐसे उतरी—
सारे पथ हो गए अपरिचित, दिशा दिशा गुमनाम है।

थकी हुई हारी आशाएँ, बुझा बुझा-सा घायल मन,
इतना यह दुर्भाग्य कहाँ से ले आया मेरा जीवन ?
सोच रहा हूँ ऐसे जीवन को
विराम देने वाली—
इतनी अच्छी मौत व्यर्थ ही दुनिया मे बदनाम है ।

पर लगता है जैसे यह सूनापन मुझमे बोल रहा है,
जीवन और मरण के चिर-रहस्य जैसे है खोल रहा,
यह कि जिन्दगी शोर-शराबे
और दर्द मे डूबी है—
और मौत के आगे सारा हाहाकार तमाम है ।



छू गई कोई किरण

मृत्यु-सी मूर्च्छित किसी की जिन्दगी की बीन को
छू गई कोई किरण—झंकार ही झंकार—

किसी प्यासी आत्मा की किस अशेष पुकार पर
कौन आया जन्म जन्मान्तर भटक कर द्वार पर ?
क्या हुआ ? किसने अचानक प्राण के आधार पर—
रख दिये अनुराग के अंगार ही अंगार—

थरथराती भूमि सारी, टूटता आकाश,
डूबता मन का समुन्दर, उफनता उच्छ्वास,
क्या हुआ, सहसा समय के सिंधु मे यह क्या हुआ
कुछ नही दिखता कही, इस पार या उस पार—

जल, अभागे मन, जलन से जगमगाले प्राण,
बहुत आकुल था न पाने प्यार का वरदान।
यह वही तस्वीर है जो माँगता था तू—
कर गई अंकित जिसे तेरे लहू की धार—

और सब चुपचाप रहकर देख, कुछ मत बोल,
घाव अनगिन हो हृदय मे—एक भी मत खोल,
इस तरह यह जिन्दगी, वह जिन्दगी—सब दे,
खो चुका तू स्वय ही हर जन्म का अधिकार—



स्नेह और बाती

तन की मिट्‌टी के दीपक का स्नेह जल चुका
अब प्राणों की बाती को भी जल जाने दे।

रात शेष है, भोर दूर, पर पूरी हुई कहानी मेरी
अब तो मुझे साँस लेने दे ओ नभ के अदृश्य अहेरी।
जब तक शक्ति रही तेरी करुणा का यशोगान गाया है
अब इस हारे मन को निर्मम। नयन-पथ से ढल जाने दे।

सत्ताइस

तेरा रूप जहाँ भी झलका मैंने अपना शीश झुकाया
बाँध लिया मैंने बाँहों में जो भी तेरा होकर आया
किन्तु ज्योति सपने-सी आकर मुझको छनभर छली गई है-
अन्धकार को आकर मेरा यह अस्तित्व निगल जाने दे।

टूटी ही पतवार लिये मैं कितनी दूर चला आया हूँ
कितने घूँट, जहर के पीकर शान्त रहा हूँ, मुस्काया हूँ
एक फूल तेरी बगिया का मुरझाया तो क्या कम होगा ?
इस निर्गन्ध सुमन को अपने पाँवों तले मसल जाने दे।



फूल की सौगन्ध

फिर मुझे आवाज देती हैं घटाएँ,
ले चली मुझको उड़ाकर ये हवाएँ,
कुछ कहो मत आज मुझसे—डूब जाने दो।

जानता हूँ, जहर है, जो पी रहा हूँ,
फूल ने दी थी शपथ, सो जी रहा हूँ,
और यह जो शूल-सा पापी जमाना
है, उसे मेरा लहू जी भर बहाने दो।

जब चुनौती दो—हिमालय को, न तृण को,
शीष ने झुकना न जाना एक क्षण को,
आज यह संसार जो आँधी उठाता
है, उसे रोको नहीं—नज़दीक आने दो।

लो, चला हूँ फिर गुनाहों की डगर पर,
रोक दो सामर्थ्य जिसमें आज आकर,
या कि कायर हो इसे स्वीकार कर लो—
और मुझको मौन अपनी राह जाने दो।



लहर माँगता हूँ

उमड़ती हुई आँधियों से, पवन से,
गरजते हुए बादलों से, गगन से,
लहर माँगता हूँ, किनारा नहीं मैं।

कहाँ तक अँधेरा रहेगा सदन में
किसी दिन भरूँगा इसे रोशनी से,
कहाँ तक अमावस घिरेगी गगन पर
कभी सींच दूँगा इसे चाँदनी से,

बुझे दीपको से, अन्धेरे सदन से,
तिमिर के ज़हर से जले इस गगन से,
समय मांगता हूं, सहारा नही मैं ।

गगन मे खिले चाद-सूरज सितारे
किसी और को रोशनी दें, किरन दें,
स्वय ही प्रकाशित अमृत पुत्र हूं मैं
मुझे आंधियां अग्निमय दें, जलन दें,

उमर भर अधेरी निशा से लडा हूं,
अभी गीत के शस्त्र लेकर खडा हूं,
लगे घाव हैं किंतु हारा नही मैं

यही एक क्षण जो मिला है, बहुत है,
यही जन्म जन्मा तरो तक चलेगा,
जिसे प्राण की अग्नि से है जलाया
दिया भावना का युगो तक जलेगा,

बहुत प्यार है इस धरा से मुझे, पर
मुसाफिर ठहरता नही है किसी घर,
यहां जन्म लूंगा दुबारा नही मैं ।



यह जलन कैसे मिली है

कुछ न पूछो यह जलन कैसे मिली है
जो तुम्हारी चाँदनी से मिट न पाई,
बुझ न पाई हाय मेरी प्यास ! मेरे चाँद ।

चाँदनी ही तो कभी पीता रहा हूँ,
किन्तु फिर भी आज यूँ रीता रहा हूँ,
क्या करोगे देखकर भी ये जहर के
घाव जो चुपचाप मैं सीता रहा हूँ ?

काल के उस छोर पर यह सत्र हुआ था—
कर सको तो करो बस विश्वास, मेरे चाँद।

यह जलन ही ज़िन्दगी है अब हमारी,
प्यास ने पी ली जगत की छाँह सारी,
धूप हो या चाँदनी—सब एक सा है,
उठ चली जब साँस की अन्तिम सवारी

अब हमे यह रेशमी सपने दिखाकर
इस घड़ी तो मत करो परिहास, मेरे चाँद।



बादल–बिजली

मैंने तो सोचा था बिजली आग लगाने आई है—
बादल ने भर दिये नयन मे इन्द्रधनुष के रग ।

दूध-जले मेरे मन को सदेह सहज ही था घेरे,
अब तक जलते ही तो आये थे सुख के सपने मेरे,
अरमानो की धूल भरी झोली लेकर चलता आया—
किसे पता था मन मे फिर उठ सकती कभी उमग ।

यह जो नेह भरा तन-मन पर सच है या कि एक सपना ?
यह जो एक प्रवासी लौटा है, है अन्य या कि अपना ?
डूब गया हूँ सिफ, चेतना बिखर गई इस क्षण मेरी—
नही जानता रुकूँ या कि उड चलूँ पवन के सग ।

सोच रहा हूँ आज अचानक यह रस-धार भरी कैसे ।
सपनो की आदी ये आँखें सुख से आज भरी कैसे ।
प्रीति जाल मे किसने मेरा यह अस्तित्व आज घेरा
कैसे छूट सकेगा इससे मन का मत्त कुरग ?



तुम मेरी मुक्ति

लो, एक बार फिर तुमने मुझे निहारा,
मुक्ति और नजदीक आ गई मेरे ।

यह चिर अजस्र, अविराम समय की धारा
ले गई बहाकर कितने जीवन मेरे ।
कितने उलझे-उलझे सपनों में मुझको
भटका लाये हैं ये रहस्य के घेरे ।

अब एक बार फिर तुमने मुझे निहारा—
मुक्ति और नज़दीक आ गई मेरे ।

मालूम नही था कहाँ जा रहा हूँ मैं
कुछ होश नही था जीवन है कि मरण है,
चिन्ता न कभी की किस गुनाह के पथ पर
बढता जाता मेरा हर नया चरण है,
लो, एक बार फिर तुमने मुझे पुकारा—
शक्ति और नज़दीक आ गई मेरे ।

कितने-कितने ज़हरीले सपने देखे
जो मन पर उतरा—उतरा अमृत बनकर
अरमानो की जितनी भी धूल उडी है
अब प्यार बन गई धीरे धीरे छनकर,
लो, एक किरन यह और छू गई मुझको—
तृप्ति और नज़दीक आ गई मेरे ।

कुछ ऐसी बेहोशी की नीद लगी थी
मैं सपनो मे तारो से जा टकराया
कुछ ऐसी मस्ती ने आ घेरा मुझको
उद्धत मन ने देवो को जा ठुकराया
पर यह अनुराग तुम्हारा है, या जादू—
भक्ति और नज़दीक आ गई मेरे ।



आने दो, रोशनी सदन तक आने दो

अपना स्वर सबके स्वर से टकराने दो,
अपने गीत जमाने भर को गाने दो,
दम घुट जायेगा इन बन्द दीवारों में—
आने दो, रोशनी सदन तक आने दो।

सपनों की दुनिया में रहकर जी लोगे
अपने को इतना एकाकी मत मानो,
जो है दर्द तुम्हारा वह मेरा भी है,
सबका है—यह बात दर्द की पहचानो
अपने सुख की सीमित परिभाषा को अब
जाने दो कुछ और दूर तक जाने दो।
आने दो रोशनी सदन तक आने दो।

अंधकार घिरता आता, आकाशो पर
सूरज बदी हुआ तिमिर की बाँहो मे
हर प्रकाश का पथी ठोकर पर ठोकर
खाता भटक रहा अनजानी राहो मे,
हर बुझने दीपक मे ढालो स्नेहासव—
दीपक दीपक को सूरज बन जाने दो।

आने दो, रोशनी सदन तक आने दो।

खोलो बद किवाड हृदय की कारा के
बाहर तुम्हे बुलाता है जग का जीवन,
देखो अम्बर मे खिल आए नील-कमल
देखो भू पर निखरा है कुकुम, कचन,
जाने दो पतझर की सर्द हवाओ को—
अब वासन्ती पवन चमन मे आने दो।

आने दो रोशनी सदन तक आने दो।



बुझते दिये जलाओ

कुछ और रात बाकी, कुछ दूर है सवेरा—
हिम्मत न हार बैठो, गर्दन झुकी उठाओ,
हर द्वार-देहरी के बुझने दिये जलाओ।

तुम राह देखते हो जिस चाँद की गगन में ?
किस किरन की दिशा में आँखें बिछा रहे हो ?
तुमने कभी न जानी जो शक्ति है तुम्हारी
वह रोशनी कहाँ है जिसको बुला रहे हो ?

तुम एक बार अपना संकल्प दृढ करो तो—
सब दीप जल उठेंगे, आवाज तो लगाओ।

ये रात के अन्धेरे, ये स्याह-स्याह बादल,
तूफान की हवाएं तुमको डरा रही हैं।
माना कि जिन्दगी की यह रात है भयानक
माना कि रोशनी की कोई किरन नहीं है,

पर तुम स्वय अनल हो, तूफान हो, प्रलय हो—
जो सो रहा हृदय मे भूचाल वह उठाओ।

जागो, दिशा-दिशा को आवाज़ फिर लगाओ,
अपनी तमाम ताकत इस वार आजमाओ,
दीवार जो जहा हो, उसको वही गिराओ,
आकाश पर, ज़मी पर तुम रास्ता बनाओ,

बिछ जायेगी तुम्हारे पथ पर सुवह सिंदूरी—
आगे बढे चलो तुम, थक कर न बैठ जाओ।



कवि पागल है

एक सितारे से पूछा अम्बर का छोर कहाँ तक है ?
: एक सितारा मुस्का कर बोला 'शायद कवि पागल है ।'

ी अम्बर की तारो के मोती-वाली झलमल चुनरी
ी अम्बर के मस्तक की रेखा मे कुंकुम-सी बिखरी
छ ऐसा मोह हुआ मन मे अम्बर को बाँहो मे भर लूँ—
र एक सितारे से पूछा अम्बर का छोर कहाँ तक है ?
र एक सितारा मुस्का कर बोला 'शायद कवि पागल है ।'

ठोकर खा, आहत हो जागा, सपनो मे सोया सोया मन,
तब सारी रात बिता दी रोकर, चाहा आए एक किरण
दूभर हो आया अधकार जीवन का, प्राण बहुत रोये—
तब तम से ही पूछा, जीवन-रजनी का भोर कहाँ तक है ?
वह अन्धकार कर अट्टहास बोला 'शायद कवि पागल है।'

जी भर देखा यह चारो ओर लगा मेला दीवानो का
सपनो का घिर घिर कर आना, झूमना मदिर अरमानो का
जब सह न सका यह मेरा मन चीत्कार उठाकर वह बोला–
ओ मेरे भाग्य विधाता ! कह जीवन का छोर कहाँ तक है ?
निष्ठुर विधि ने भी व्यग्य किया, बोला 'शायद कवि पागल है।'

हर एक सितारे से पूछा अम्बर का छोर कहा तक है ?
हर एक सितारा मुस्का कर बोला 'शायद कवि पागल है।'



तू समझ कि तेरी [illegible]

माना पतझर की हवा चली,
हर फूल झरे, हर कली जली,
पर मेरा मन गाता है अब भी [illegible] —
[illegible]।

यह मेरा मन [illegible],
यह मेरा मन [illegible],
वह तीव्र [illegible] —
बीते वसन्त का [illegible]

यह तो जीवन की सरिता है, इस ओर रुकी, उस ओर बढी
यह तो उमग है सपनो की, पाताल गिरी आकाश चढी
यह दीप स्नेह का है साथी ! जलता भी है, बुझता भी है
यह जीवन का है सत्य अमर, हो जाती है बस एक घडी

माना कि आज मन टूट गया
माना हर साथी छूट गया
पर नये पथ पर, नई शक्ति से, साथी नये जुटाऊँगा
फिर गाऊँगा आह्लाद मे ।

यह जीवन की किताब पर स्याही फैल गई है रात की,
यह अधकार ग्रसता है शोभा अतर के जलजात की
यह वतमान की व्यग्य-भरी मुस्कान मुझे मालूम है—
पर पतझर को बहार कर देगी रचना मेरे हाथ की

माना कि तिमिर ने घेर लिया
माना तूने मुँह फेर लिया,
पर तुझे, चाँद को, किरणो को, फिर बाध यहाँ ले आऊँगा—
मैं अपने इस उन्माद मे ।



प्रिय वसन्त ! उतरो, उतरो !

जग-जीवन की शून्य सृष्टि पर प्रिय वसन्त ! उतरो, उतरो !
प्यासी वसुधा के प्रागण मे सुमन-हास बनकर बिखरो,
चिर-रहस्य के छाया पथ से
हे अनन्त !
उतरो ! उतरो !

घिर आए कितने नैराश्यो के सूखे-सूखे पतझर,
एक एक कर आशाओ के सारे पत्र गए झर-झर
इन नगी शाखाओ की याचना-भरी बाँहे फैला—
धरती भेज रही है तुम तक, करुण प्रार्थनाओ के स्वर,

शस्य श्यामला की लज्जा का
आँचल और न जीर्ण करो,
बहुत हो चुकी मनुहारें, अब
मधु वसन्त उतरो ! उतरो !

मंजरियों के मधुमय सौरभ के वरदान लिये आओ
बहुत उदास रह चुकी धरती, कोकिल-गान लिये आओ!
प्राण-हीन खेतों की रानी फिर जीवित हो महक उठे—
कंचन की मुस्कानों-वाली सरसों, प्राण लिये आओ

फिर सौरभमय सुमनों की
मधुमय मुस्कानों पर विहरो!
हे वसन्त! धरती की सूनी
प्यासी पलकों पर उतरो!

हे वसन्त! सपनों के नील गगन से अब नीचे उतरो!
सजल स्नेह के सुमनों से वसुधा की सूनी माँग भरो!
कितनी बार पुकारा तुमको, कितने आमन्त्रण भेजे—
युग-युग से चलते, जलते सपनों को अब तो सत्य करो!

धरती की विनम्र अंजलि में
अपने कुसुमित चरण धरो।
हे वसन्त! हे मधुमय! अब तो
जनम-जनम की तृषा हरो!

चिर रहस्य के छाया-पथ से
हे अनन्त!
उतरो! उतरो!!

*

मेरा स्वप्न   तेरी माया

मेरे द्वार रूप उस दिन था भीख मागने आया,
मैंने अपने स्नेह-स्पर्श से उसमे प्राण जगाया,
मेरे स्वप्न-स्वप्न की सत्य, शिव, सुन्दरम् शोभा,
मुझको क्या मोहेगी तेरी भुवन मोहिनी माया !

मेरी ही छाया से ज्योतित तेरे चाद सितारे,
सूरज को मैंने ही दान दिये अनन्त उजियारे,
अम्बर को व्यापकता दी है, सागर को गहराई—
मुझसे ही करुणा-जल लेकर गये सघन कजरारे,

मैंने ही उस दिन फूलो की गोद तुझे सौपी थी—
अब क्या मान करेगी मुझसे तेरी कचन काया !

मेरी आत्मा का अनन्त संगीत भुवन में गुंजित,
तू क्या, तेरे रोम रोम में मेरा जीवन मुखरित,
जिधर तूलिका उठा कल्पना की रेखाएँ खींचूँ—
तू क्या, तेरे जन्म जन्म की छवियाँ कर दूँ चित्रित

अंकित कर दूँ गीत गीत में छंद-छंद में तुमको
तुझे न जाने किस पर इतना अहंकार हो आया !

रक्षित अपना रूप-जाल कर, अग्नि किरण आती है,
यह आस्था है किसी प्राण की, लक्ष्य वेध जाती है,
मोह मृत्यु है मोहिनि ! जीवन प्यार दिया करता है—
और प्यार करने वाले की बड़ी कड़ी छाती है,

नील कंठ बन तेरे विष का सागर सब पी लूँगा—
तुझे न कहने दूँगा अमृत पिया, जहर ठुकराया ।



उतरो जीवनमय ! ज्योतिर्मय !

तमसावृत्त भू-जीवन की इस अंध-गुहा से
कवि की आत्मा की चेतनता
नव-प्रभात को, कनक-किरण को, मनस् मुक्ति को
फिर आवाज़ लगाती है—
उतरो जीवनमय ! ज्योतिर्मय !

जग के शत-शत कलुष बन्धनों मे बंदी
कवि की यह वाणी
आज मुक्त हो
करती है आराधन फिर से
प्राण-प्राण मे, हृदय हृदय मे
फिर गूंजे वह विश्व-रागिनी—
चिर-मंगलमयि, चिर-विकासमयि, विश्व-रागिनी ।

मानव-मन की सूक्ष्म सृष्टि पर
गहन तिमिर की पर्तो पर पर्तें घिर आईं,
कभी कभी यह भय होता है—
जैसे भू जीवन की दुर्बलताएँ सचमुच बहुत बडी हैं,
किन्तु तिमिर की दुर्निवारता का भेदन कर
स्वयप्रभा, शाश्वत, चिर-दीपित
विश्व ज्योति का आराधक यह
कवि के प्राणो का लघु दीपक
ससृति के घूमिल मदिर मे
चेतनता की पावन किरणो को बिखेरता
तप निरत है—यह निश्चित है ।

यह निश्चित है—
भू जीवन फिर से उभरेगा,
जन-जीवन की देह प्राण-आत्मा से लिपटे
कुछ कलुषित स्वार्थो के बन्धन
जागृति की पहली अगडाई से टूटेंगे,
अधकार की कारा मे बन्दी मानवता
मोहमयी मूर्च्छा से उठकर
बदीगृह की छाती चीर खडी होगी फिर,
फिर जीवन की गहन रात्रि पर उषा खिलेगी
किरणो का कुकुम बिखरेगा
मुक्त पवन की श्वास श्वास पर
जागृति यत्र निनादित होगा —
उतरो जीवनमय ! ज्योतिमय !
भू जीवन हो जाग्रत, निभय,
उतरो, उतरो हे ज्योतिमय !!



झील-परी

अमराई का आँचल ओढे गुमसुम सोई झील-परी
दरपण-मुख पर रजत-रेशमी चंदा की किरणें बिखरी,
किस छवि के जग के उतरी--
झिलमिल झिलमिल झील परी !

किसी विदग्धा के मीठे से
मिलन स्वप्न-सी, वेसुध-सी,
मौन, किन्तु, पल-पल लहरो के
अधरो से मुस्काती सी,

कभी गधवाही की आतुर
बाँहो मे अजान बधकर--
प्रिय की मधुर कल्पनाओ मे
डूब डूब खो जाती-सी,

क्षण क्षण चौक-झाँक जाती सी
स्नेह भरी उन्माद-भरी

किस छवि के जग से उतरी
झिलमिल झिलमिल झील परी !

मैं तट पर बैठा सपनों को
फिर आवाज़ लगाता हूँ—
उस पुकार पर केवल हस देती है
निष्ठुर झील-परी

मैं अतीत की छवि-रेखाएँ
तट पर बैठ बनाता हूँ
लहर उठाकर मिटा-मिटा देती
सब छवियाँ झील-परी

बहुत बहुत सुन्दर है, सच है,
पर कितनी अभिमान भरी।

निष्ठुर-निष्ठुर झील-परी!

अमराई का आँचल ओढे गुमसुम सोई झील परी,
दरपण-मुख पर रजत-रेशमी चदा की किरणें बिखरी,
किस छवि के जग से उतरी
झिलमिल-झिलमिल झील-परी!



सीमाहीन पिपासा

तुमने जब भी पढ़ो, पढ़ी है मुस्कानो की भाषा,
तुमने कब जानी है मेरी सीमाहीन पिपासा !

तुम सागर के तट पर बैठे मोती बीन रहे हो
तुम्हे नेह से नहलाने को बादल घिर-घिर आते,
मेरा मन जो ज्वार उठाकर उफनाया करता है
तुम उस दग्ध हृदय की तप्त जलन को देख न पाते,

तुम अपने हो सुख मे डूबे
क्षण भर सोच न पाए—
कितनी जलन मेघ के मन मे, सागर कितना प्यासा !
तुमने कब जानी है
मेरी सीमा हीन पिपासा !

जीवन के मरुथल मे भटका-सा एकान्त प्रवासी
मैं अशेष तृष्णा लेकर यह तुम्हे पुकार लगाता
किन्तु अनाहत सा मेरा स्वर सीमान्तो तक जाकर
लौट-लौट आता फिर मेरे अधरो पर उफनाता

तुम अपने सपनो की छाया मे
बैठे गाते हो—
कफन उढ़ाया करती मुझको मेरी ही अभिलाषा।
तुमने कब जानी है
मेरी सीमा हीन पिपासा ?

चाहे भव भव तक भी मुझको तृप्ति रहे तरसाती
किन्तु यही निस्सीम पिपासा लेकर जला करूंगा
तुम अपने मन के मंदिर मे सुख का दीप जलाना
मैं दीपक की स्नेह वर्त्तिका बनकर गला करूंगा

तुम अपने जीवन का भी
सब दर्द मुझे दे देना—
मैं तुमको दे दूंगा अपने सपने, अपनी आशा।
तुमने जब भी पढी
पढी हू मुस्कानो की भाषा!
तुमने कब जानी है
मेरी सीमा हीन पिपासा!

•

दीपक तेरे द्वार का

ग युग तक निर्बाध जले, प्रिय !
दीपक तेरे द्वार का,
बाती हो तेरे मन की, पर,
सिंचन मेरे प्यार का।

मलय कहीं घूमे पर पहले तेरी पलको को चूमे,
तेरे आँगन फूल खिलाकर फिर बहार वन मे झूमे,
तेरी साँसो की सुगध से फूलो मे सौरभ जागे
तेरा मन उपवन हो मेरे गीतो की गुजार का।

चंदा नील गगन मे तेरे मुख की छाया बन डोले,
तेरा इंगित पा प्रभात अलसायी आँखो को खोले,
तेरी जीवन-तरी कि सात समुद्रो पर तिरती जाये
नैया तेरी, आश्रय मेरी बाँहो की पतवार का ।

निशि प्रति निशि निमल हो तेरी दीप शिखा सी यह काया,
कभी न मुरझाये मन तेरा, घिरे नही तम की छाया,
जीवन की बाँसुरी बना कर तू प्रतिक्षण मगल गाये
तेरा गीत, अमर हो मेरे मन की मौन पुकार का ।

युग युग तक निर्बाध जले, प्रिय ।
दीपक तेरे द्वार का,
बाती हो तेरे मन की, पर
सिंचन मेरे प्यार का ।



जलन का गीत

यही सोच कर बुझा नही हूँ जीवित हूँ, जलता हूँ
बुझता दिया किसी आँगन का शायद फिर जल जाय !

बहुत सघन होती है दुख की लम्बी, काली रात,
बहुत दूर दिखता है सुख का मधुमय हेम प्रभात,
कुछ धीरज बध जाता यदि कोई साथी मिल जाय !

चलता हूँ हर नया कदम मैं फिर ठोकर खाता हूँ,
ग़म कुछ ऐसा है कि कहूँ क्या, मैं फिर भी गाता हूँ,
जीवन की वीणा का मूच्छित तार कभी हिल जाय !

डूब रहा हूँ किन्तु चुनौती अभी किनारों को है
सिर्फ किरन को नहीं चुनौती, चांद सितारों को है,
तभी बुझूँगा जब कि पक्ति का नया दीप जल जाय !



चांदनी मेरी

इस गगन से भूमि तक यह चांदनी मेरी ।

बाँह मेरी फैल कर लेती समेट दिगन्त,
और मेरी चाह बन्धनहीन मुक्त, अनन्त
स्वप्न मेरा इस धरा का भी, गगन का भी
इस गगन से भूमि तक सब चांदनी मेरी ।

गा रहा हूँ दर्द यद्यपि, किन्तु है विश्वास,
यह, कि यह पतझार मेरा, और यह मधुमास,
भर रहा हूँ मैं भुवन मे प्राण का सगीत
गीत मेरा, बीन मेरी, रागिनी मेरी।

चेतना मेरी असीम, अबाध और अछोर,
खुल रही मेरी पलक या खिल रहा है भोर,
गीत मे मेरे प्रभाती और सध्या-राग
सुबह मेरी, साँझ मेरी यामिनी मेरी।

आज मेरे स्वप्न लेकर उड रहे बादल,
आज मेरी श्वास से मधुमास भी पागल,
कल्पना मे बाँध ली निस्सीम की सीमा
आज सारी सृष्टि है अनुगामिनी मेरी।

इस गगन से भूमि तक
यह चाँदनी मेरी—



मेरा अन्तर्मन

पा न सका हूँ जिसे न मैं पहचान सका हूँ
एक भाव है अन्तर्मन मे व्याप्त सनातन ।

कल्प बीतते जाते हैं अविराम, अभागे,
और दृष्टि बढ़ती जाती है आगे आगे,
किन्तु जिसे पाना था वह अब भी खोया है—
और उलझते ही जाते रहस्य के धागे,
जो मेरा अस्तित्व घेर कर तो बैठा है
किन्तु जिसे छू सका न अब तक मेरा जीवन ।

एक वही मेरे जड जीवन मे चेतन है
केवल एक वही जिससे जाग्रत क्षण क्षण है,
फिर क्यो वह अब तक न मुझे मिल सका कि जो इस
आत्मा का आलोक, प्राण का सजीवन है ?
क्या है वह अस्पष्ट कि मेरी सांस सांस औ'
मेरा रोम रोम जिसका करता आवाहन ?

यह मेरा सुख है कि दर्द है, कौन कहेगा ?
कब तक मेरा प्राण पिपासित और रहेगा ?
यह जो एक सनातन भटकन की ज्वाला है
कब तक इसका दाह दुखी मन और सहेगा ?
नयी नयी होती जाती है हर जीवन मे
यह मेरे अभिशप्त हृदय की पीर पुरातन।

एक भाव है
अन्तमन मे व्याप्त सनातन।



यह सजा मिली मुझे प्यार के गुनाह में

सो गया गगन मगन चांदनी की छांह मे,
बासुरी सिसक रही दूर किसी गांव मे,
क्या किसी की राधिका खो गई है आज फिर—
दर्द मुझे मिल रहा आज किस गुनाह मे ?

फूल फूल पर हँसी, शाख शाख है मगन,
खिल रही कली कली, झूम कर बहा पवन,
झर रहा पराग, उड रही दिगन्त मे सुरभि
देख कर अलिन्द को कली झुका रही नयन,
इस भरी बहार मे जो मिला सुखी मिला—
एक प्राण है कि जो भटक रहा है राह मे ।
और प्रश्न उठ रहा कि कौन से गुनाह मे ?

स्वप्न के खुमार मे, झूमती बहार मे,
तीर पर कभी कही या कि तेज धार मे,
खूब मन बहा किया, खूब खेलता रहा
चाँदनी मे, धूप मे, डूब गया प्यार मे।
किंतु स्वप्न उड गया और याद रह गई–
और टीस उठ रही बे-हिसाब घाव मे।
यह सजा मिली मुझे प्यार के गुनाह मे।

कौन सा गुनाह है कि चाँदनी से दूर हूँ
तार-तार मग्न हैं, रागिनी से दूर हूँ,
क्या गुनाह हो गया कि साँझ से, प्रभात से,
चाँद से खिली हुई यामिनी से दूर हूँ ?
और आज गीत भी रूठ कर चले गये–
गा रहा हूँ दद को आह मे, कराह मे।
जानता नही कि यह कौन से गुनाह मे।

किन्तु टूटती नही आस्था है प्राण की,
दाँव पर लगी हुई आन स्वाभिमान की,
देह के दुआर पर आत्म-दीप जल रहा
कर रहा है चितना ज्योति के विहान की,
हार कर कभी तिमिर लौट स्वय जायगा–
शक्ति शेष है बहुत भावना की बाँह मे।
आज दद ही मिले बिन किये गुनाह मे।



बिन लिखी पाती

मेरी यह पाती तुम कभी पढोगे क्या ?
शबनम की स्याही से रजनी
लिख-लिख जाती रोज सदेसे
और सुबह अक्षर अक्षर को पी जाती है

लहर-लहर पर सागर का मन
अपना दुख बिखेर देता है।
और चाँद हर लहर लहर पर
टुकड़े-टुकड़े हो जाता है,
फिर तुम तो तुम ही
न चाँद हो, और न सुबह हो,
बहुत बड़े हो—

तुम तो मेरे अंतराल तक पैठ चुके हो,
दृश्य अदृश्य
व्यक्त-अव्यक्त—सभी पढ़ते हो,
मेरे मन के भाव-अभाव सभी तुम ही हो

तुम मेरे तन की मिट्टी से
कभी प्यार की कंचन-मूर्त्ति गढ़ोगे क्या ?
मैं तो खिल न सका
पर तुम तो तुम हो, बोलो।
मेरी यह पाती तुम कभी पढ़ोगे क्या ?



प्यास को तृप्ति देना नहीं दोष है

यह किसे ज्ञात है पाप क्या, पुण्य क्या,
एक ही बात जानी विकल विश्व मे—
प्यास को तृप्ति देना नही दोष है।

प्यास का रूप क्या ? प्यास की देह क्या ?
यह सदा ही अरूपी, विदेही रही,
यह किसी चातकी के स्वरो मे जली
या किसी मेघ से स्वाति बनकर बही,

प्यार की आँख को रूप की प्यास है
रूप को बाँह मे कामना की तृषा—

अर्थ यह है कि जीवन स्वय प्यास जब
प्यास को तृप्ति देना नही दोष है।

एक सागर युगो से पिपासित रहा,
एक सरिता तृषातुर उमडती रही,
एक मेरे नयन मे बसी प्यास जो
जन्म-जन्मान्तरो से उफनती रही,

दर्द का क्षीर-सागर मथा जब गया
तुम मिले हो सुधा के कलश को लिये—
एक ही बूँद दोगे, मगर जानता हूँ,
कि दोगे, यही एक सन्तोष है।

एक क्षण यामिनी की भुजा मे कसे
प्राण ! मदहोश आकाश को देख लो,
एक क्षण यह तुम्हारे दिये दर्द से
जो मिली है मुझे प्यास को देख लो,

प्रिय बहुत हो चुका, तुम उठाओ कलश
और मधु से तृषातुर अधर सीच दो—
पुण्य के देवता जो कहे सो सुनूँ
बैठकर, आज इतना नही होश है।
यह अभागा जगत जो कहे, सो कहे—
प्यास को तृप्ति देना नही दोष है।



अच्छा ही था

यह निशा अंधेरे मन मे मेरे शत शत दीप जला जाती
जिसमे तुम सपना बनकर मुझ तक आती हो,
जिंदगी तुम्हारे सपने वाली रात अगर बन जाती—
तो अच्छा ही था ।

यह धुली हुई रोशनी सुबह के सूरज की
मेरे अमृत सपनो पर स्याही फेर गई,
यह जग जीवन मे उमडा है उल्लास नया
मैं देख रहा हूँ तुम तो इसमे कही नही,

फिर मेरा क्या सम्बन्ध चमकते सूरज से—
इस धुली रोशनी मे मेरी मजिल खोई—
यदि अंधकार के इस पथ पर तुम छाया बन मिल जाती
तो अच्छा ही था ।

इक्हत्तर

जिन्दगी बहुत सी साँसों का सम्भार नहीं
जिन्दगी एक अनजान भाव की भाषा है,
जिन्दगी निरी आदर्शों का अधिकार नहीं
जिन्दगी एक अनबुझ, विनत अभिलाषा है,

बस इसीलिए मैंने अपनी साँसें सारी
चाहे अजान तुम रहो किन्तु तुम पर वारी
तुम कभी अगर मेरे गीतों का दर्द समझने आती
तो अच्छा ही था।

वह कौन देवता है जिसका आराधन हो ?
मुझको लगता यह प्रश्न न उत्तर पाएगा,
यह जन-जीवन बस इसी तरह चौराहे पर
अविराम और असहाय भटकता जाएगा,

मैंने तो बस यह मान लिया तुम मेरे हो,
मेरे जीवन, अस्तित्व, प्राण को घेरे हो,
जिस स्वप्न लोक से आती हो तुम, कभी मुझे दिखलाती
तो अच्छा ही था।

जिन्दगी तुम्हारे सपने वाली रात अगर बन जाती
तो अच्छा ही था।

•

कहाँ खो गए ?

यह मेरे मन का मधु-पछी
मधुर तुम्हारी स्मृतियो के चल-पख लगाए
भटक रहा है,
इन सुनसान घाटियो मे
इन झीलो के इस पार और उस पार—
क्षितिज की सीमाग्रो को छू-छूकर
फिर लौट-लौट आता हताश-सा
यह मेरे मन का मधु पछी
इन गिरि शिखरो पर मडराता
तुम्हें खोजता है,
पुकार मे केवल तुम हो—
इस पुकार का स्वर धीरे-धीरे उठना

पर
फिर छा जाता है नभ की असीम सीमा तक,
अम्बर के समुद्र में जैसे मथन उठता
और
लहर पर लहर घहरती आती है फिर—
दसों दिशाएँ जस चीख-चीख उठती हैं
और पूछती हैं मुझसे—
तुम कहाँ खो गए ?
मैं क्या उत्तर दूँ ?
तुम बोलो
कहाँ खो गए ?



लहर ग्रौर मैं

इस लहर को बांध लूँ भुजपाश मे, जो
शीश धुनती जा रही इस ग्रोर से उस ग्रोर ।

मेरी भावना के साथ इसका विकल हाहाकार
मेरी प्यास का साथी लहर का यह चिरन्तन प्यार ।
इसको एक भी तट नही, मुझको बन्द हैं सब द्वार
मन की कामना है यह
लहर के साथ बह जाऊँ—
सपन तो बध न पाए, बांध लू ग्रब प्रलय का ही छोर ।

किसी ग्रनुराग की मारी, किसी के दर्द से घायल
किसी ग्रभिशाप से पीडित लहर बेचैन है पल पल
कि मेरा मन ग्रभागा भी किसी ग्रनजान पर चचल
निमिप भर साथ इसके बैठ कर तकदीर को रो लूँ—
ग्रभी तो दूर होगा जि़दगी की रात का वह भोर ।

लहर, आ, खींचदे मेरे दुखी मन में सजल रेखा।
कहाँ सुख भी प्रतिष्ठित है यहाँ, किसने कभी देखा?
मुझे ग्रस ले कि लेगा कौन मेरे भाग्य का लेखा।
डुबोदे ज्वार में, मेरे
हृदय की कल्पनाओं को—
उठा, फिर से उठादे प्रलय वाली वेगवान हिलोर।



यह अशेष रिक्त

सारी रात गई, न चाँद वह अब तक उतरा मन मे,
कब तक रीते-रीते सपने भटकेंगे जीवन मे ?

बाँध न पाया अब तक जो जीवन मे उफनाता है,
जो अन्तर मे लहराता है, अधरो पर गाता है,
वह अदृश्य जो छाया बनकर मुझ पर छाया रहता
जो उमग बन उठता रहता मेरे मन मे, तन मे ।

कितना चाहा एक लहर हो ऐसी मुझ तक आए,
जो मुझको अपने सपनो की मंजिल तक ले जाए,
किन्तु बीतते जाते हैं दिन, मास, वर्ष, सब यूँ ही—
तट पर मौन खड़ा ही रह जाता हूँ मैं उलझन मे।

कब तक यह दुर्दिन की आँधी मुझको भरमाएगी ?
क्या प्रकाश की रेखा मुझ तक कभी नही आएगी ?
क्या यह अँधियारा ही मेरे मन का रिक्त भरेगा—
क्या यह सारा ही जीवन बीतेगा इसी जलन मे ?



किन्तु

अब भी कभी कभी सपने से तुम आते हो, किन्तु ।

वे उन्मादी दिन, बेहोशी के पल, कब के बीते,
आँखों के रतनारे मधुघट हैं अब रीते-रीते,
जिस पथ से मधुमास लिये तुम सुबह-साँझ आते थे—
भूले-भटके उसी पन्थ पर मिल जाते हो किन्तु ।

जिन नीलम नयनों से झरती थी अनुरागी आशा,
आँखों से पढ ली जाती थी जिन आँखों की भाषा,
उन आँखों के सम्मुख अब भी जब मैं आ ही जाता—
तुम धीरे से कुछ प्रयास से मुस्काते हो किन्तु ।

बहुत भूलना चाह रहे हो, मुझको तुम बड़भागी !
किन्तु बहुत मुश्किल से बस मे होता मन अनुरागी,
इसी बीच, जब तुमको मेरी याद अचानक आती—
तुम मुझसे मिलने को बेहद अकुलाते हो किन्तु !

कैसे भूल सके तुम इतनी जल्दी कल की बातें ?
वे सोने के दिन मन मोहन ! वे चाँदी की रातें ?
किस मरीचिका मे उलझे हो मुझको यही बता दो—
तुम भरसक अपने तन-मन को भरमाते हो, किन्तु !



किन्ही विगत स्वप्नो की स्मृति में

नीली नीली झील, शिशिर का तीखा, तेज पवन
किन्ही विगत स्वप्नो की स्मृति मे डूबा डूबा मन ।

मुझे और कितनी सहनी है
व्यथा तुम्हारे इस अभाव की ?
सीमा कभी नही आएगी क्या
दुख-सरिता के बहाव की ?
मन की सृष्टि दर्द के शीत पवन से
जलकर जड हो आई
एक सनातन दुख की मूर्त्त पुकार हुआ जीवन ।
हाय । विगत स्वप्नो की स्मृति मे
डूबा डूबा मन ।

किन्तु कभी तो इस जड़ता मे
जीवन का शुभ चिन्ह जगेगा
स्वप्नो की अधजली नग्न शाखो पर
फिर मधुमास खिलेगा,
यही एक आस्था लेकर मैं
सहता सब आघात शिशिर के
कभी वसन्ती प्रात खिलेगा लेकर कनक-किरण।
आज विगत स्वप्नो की स्मृति मे
डूबा डूबा मन।



अनन्त–गीत

प्रात-पवन औ' साध्य–समीरण दुहराते हैं उन गीतो को,
नश्वर थी वीणा जो टूटी, लेकिन वह सगीत अमर है ।

देह एक माध्यम है जिसको अपनाता विदेह कोई है
रूप और आकृतियाँ बनती और बिगडती रहती प्रतिपल,
जैसे लहरें उमड-उमडकर आती हैं, मिटती जाती हैं—
किन्तु सनातन है वह धारा जो लहरो से पृथक, अचचल,
इन्द्रधनुष कितने ही बादल
के पखो पर उड जाते हैं—
लेकिन यह सारा सुख दुख धारण करता शाश्वत अम्बर है ।

बेटी कल्पना की मृत्यु पर

क्या अफसोस अगर कुछ सपने टूट-टूट कर बिखर गये हैं
वह मानस जो नई सृष्टि रचता है प्रतिक्षण यदि जाग्रत है ?
और और संघर्ष झेलने की यदि ताकत है प्राणो मे—
कोई फिक्र नही यदि जग के आघातो से तन आहत है,
शिव होकर पीता जा जो
जीवन के प्याले मे ढल जाए—
तेरे अधर चूमकर अमृत बन जाएगा जो कि जहर है।

तोड सभी रेखाए धुधली कुछ ऐसा अभिनव होकर जी
जीवन की हर सांस एक इतिहास अलग तेरा बन जाए,
प्राणो की अनन्त गहराई, सुन्दरता, माधुय सजाकर
गा कुछ ऐसा गीत कि जिसको समय बार बार दुहराए,
किसी एक दिन तन की वीणा
हो जाएगी मौन टूटकर—
किन्तु मरेगा नही कभी जो चिर-मुखरित आत्मा का स्वर है।



खंडित लहर

हम दोनो से बहुत बडा है जीवन का सागर
तू भी एक लहर है खंडित, मैं भी एक लहर।

यह आई दक्खिनी पवन, यह एक लहर उठ आई,
और दूसरी लहर उठाती आई यह पुरवाई,
एक निमिष, दो लहरें, आलिंगन सम्पूर्ण कहानी
किन्तु सनातन है यह सीमाहीन, गहन सागर।

तू है एक रागिनी, जब बजती बहार छा जाती,
मैं भी एक राग की ध्वनि हूँ दूर कहीं से आती,
एक गगन, दो ध्वनियाँ, एक निमिष की यह थर्राहट
किन्तु सदा अव्याहत और अखंडित जीवन का स्वर

तू है किसी द्वार-देहरी पर रखे दिये की बाती,
मैं भी एक दीप की लौ, जो पल-पल जलती जाती,
एक निशा, दो दीप, घडी भर यह प्रकाश की रेखा
किन्तु चिरन्तन किसी ज्योति मे दोनो दीप अमर ।

यह क्षण है जो मिट जाता है, जीवन आगे चलता,
केवल रूप बदल जाने से सपना नही बदलता,
हम दोनो अनन्त की अन्तिम मंजिल तक साथी हैं
शेष जहाँ होता है जीवन का अविराम सफर ।



आ, मुसीबत की घटा !

दर्द के तूफ़ान लेकर आ,
मृत्यु का सामान लेकर आ,
आ, मुसीबत की घटा ! तेरी प्रतीक्षा है।
बुझ न पाई ज्योति अब तक झिलमिलाती
प्राण-दीपक की शिखा जाग्रत चिरन्तन,
मृत्यु के शीतल परस में भी जगेगी
अग्नि प्राणों में भरी प्रतियाम, प्रतिक्षण,
रात की सारी सियाही ला,
सृष्टि की सारी तबाही ला,
आ, मुसीबत की घटा ! तेरी प्रतीक्षा है।

दे रहा हूँ मैं स्वय तुझको निमत्रण
शक्ति हो तो इस शिखा को, आ, बुझा दे।
अमृत औ' विष जो सभी पीकर पली है
चेतना यह आत्मा की, आ, मिटा दे।
विष-भरे घट आज सब भर ला,
विष-बुझे घातक सभी शर ला,
आज तेरी और मेरी भी परीक्षा है।
मैं तुझे आघात पर आघात दूँगा
हर मुसीबत मे युगल बाँहे उठाकर,
टूट सकता हूँ, मगर झुकना असम्भव,
देख ले यह भी चुनौती आज़मा कर,
मुझे जीवन के सफर मे,
दर्द के हरएक स्वर मे,
जन्म से ही दी गई जो यही दीक्षा है।
आ मुसीबत की घटा! तेरी प्रतीक्षा है



प्रश्न चिरन्तन

कौन भरता है समय की वेणु मे ये स्वर उनीदे ?
डूबता ही जा रहा गहराईयो मे सृष्टि का मन।

ये क्षितिज के छोर तक फैली हुई गिरि शृ खलाएँ,
किस गगनवासी चरण को दे रही बढकर निमन्त्रण ?
तृप्ति-से फैले हुए निश्चेष्ट ये नीले सरोवर,
और ये अमराइयो मे हास्य किसका है रहा छन ?
कौन उडता है पवन के पख पर
सगीत-सा यह ?
कौन उतरा आ रहा है आत्मा पर यह चिरतन ?

स्वप्न परियों सी सुरभि की मधु हिलोरें उठ रही हैं,
दस दिशाओं मे बरसता किरन का सिन्दूर पावन,
एक मोहाविष्ट-सी करती अजानी कल्पना सी
छा रही सुध बुध भुलाती विकल प्राणों पर सनातन,
कौन सुर-धनु मे सिमट कर
आ रहा सौन्दय-सा यह ?
आह ! किसके स्पश सुख से विमूर्च्छित यह दग्ध जीवन ?

आज यह आलोक की धारा गगन से छन रही है
डूबता मन, किन्तु, जैसे उठ रहा अस्तित्व ऊपर,
बह रहा नव-चेतना, उल्लास का नन्दन-पवन है
आज जैसे स्वर्ग उतरा आ रहा उन्मत्त भू पर,
मुक्त होते जा रहे सब द्वार
जैसे चेतना के
ओर खुलते जा रहे सारे हृदय के जीर्ण बन्धन ।



प्रिय ! वसन्त आता

फूलो को अपनी बाहो मे भरने का
सपना मेरा भी है, और तुम्हारा भी,
लेकिन मेरा भाग्य, कि जो भी फूल चुनूँ
केवल फूल नही, होता अगारा भी,
दुनिया डूब गई है मधु के मेले मे
मेरे वीराने मे कुछ भी नया नही।

प्रिय ! वसन्त आया,
पर
पतझर गया नही।



बरात्वे

गुनहगार

वे क्षितिज कि जो प्रतिध्वनित
किया करते थे मेरे गीतो को
सब एक एक कर डूब गए
फैला जीवन मे अन्धकार ।

वे भी कुछ स्वप्निल घडियाँ थी
जब था केवल मधु का मौसम
मदहोश हवाओ मे मेरा मन
पख लगाकर उडता था,
था एक जमाना ऐसा भी
जब मेरे इगित पर उठकर
सौ-सौ सतरगे सपनो का
मेला-सा आकर जुडता था,
वह मधु का मौसम, वे स्वप्निल घडियाँ
सब मानो बीत गई—

अब शेष रह गये हैं जीवन मे
केवल कुछ जलते अगार।
मैं सोच रहा हूँ, इस पतझर मे ही
मधु का सचार करूँ,
इस अन्धकार से लडूँ,

प्राण के अग्नि दीप को जलने दूँ,
जब तक न सुबह की स्वर्ण किरण
मेरे मस्तक पर तिलक करे
तब तक इन आँखो के भटके-भटके
सपनो को चलने दूँ,
चल रही आधियाँ धूल भरी
सूनी जीवन की घाटी मे—
लेकिन जब कभी पुकारूँगा
लौटेगी, लौटेगी बहार।

लेकिन तुम ? तुमसे मेरा कोई
प्रश्न नही अब शेष रहा
मेरी बरबाद जिन्दगी मेरे सब
प्रश्नो का उत्तर है,
जो जन्म जन्म की प्रीत निभाई है
तुमने मुझसे क्षण भर
इस नयी रीत के आगे मेरा
निश्छल प्यार अनुत्तर है,
लेकिन तुमसे भी आखिर उत्तर तो
मागा ही जाएगा
तब तुम ठहराए जाओगे
अपनी आत्मा के गुनहगार।



एक क्षण

एक क्षण मे जन्म-जन्म मुझे जिला कर
अर्थ तुमने दिया मेरी कामना को,
इस प्रवासी मेघ की सौगंध मुझको
रूप दूँगा मैं तुम्हारी कल्पना को।

छवि तुम्हारे सुशोभन मन की नयन की
पुतलियो मे आज कर देखा करूँगा,
प्राण ! सौ सौ जन्म बदले मे चुकाकर
एक क्षण के मोल का लेखा करूँगा
भग्न वीणा को कि तुमने स्वर दिया है
छंद दूँगा मे तुम्हारी भावना को।

खोजता अपने सपन के देवता को
द्वार द्वार पुकारता भटका किया हूँ,
जिन्दगी तो प्रति निमिष ढलती गई है
किंतु जब तुम मिले उस क्षण ही जिया हूँ,
मैं तुम्हारे स्नेह को अनुरक्ति दूँगा
सिद्धि तुमने दी कि मेरी कामना को।

प्राण ! जो तुमने दिया इतना दिया है
रिक्तता मेरी युगो की भर गई है,
किसी बुझते से दिये पर किरन कोई
एक जादू-सा कि जैसे कर गई है,
सोचता हूँ भेंट मे रख दूँ सजा कर
प्राण का दीपक तुम्हारी अर्चना को।



यह एक लहर का प्यार नहीं, मेरा है

लहर सौ बार किनारे से टकराकर लौटी
लेकिन फिर बढी बाधने भुज बधन मे।

यह एक लहर का प्यार नही, मेरा है,
मेरी आशा ने तुमको यू घेरा है,
मेरे सपने तुमसे टकरा कर टूटे—
लेकिन फिर जागे बार बार जीवन में।

कब लहरो ने अपने तट को पाया है ?
लेकिन हर बार नया साहस आया है
मैं तुम्हे युगो तक बाध न पाऊ, लेकिन
मेरे भी गीत हँसेंगे हर क्रन्दन मे ।

यह प्यास बडी तीखी है, शात न होती,
कामना जाग कर कभी नही फिर सोती
विश्वास बडा है मेरा, अरे, कभी तो
आओगे एक बार मेरे आगन मे ।

लहरो मे सोया अभी प्रलय का सागर,
पर, कभी उठेगा, उफनेगा रत्नाकर,
उस रोज किनारे लहरो मे डूबेंगे
उस रोज बसोगे तुम आ मेरे मन मे ।



किसने फूल खिलाए

किसने फूल खिलाए
फूलो के कोमल अन्तर मे ये मधु-कोष बसाए।

मिट्टी मे जीवन की धारा
किसने सजल बहाई ?
किसके इगित से अँधियारे
मे खिलती जुनहाई ?
किसकी मुस्कानो की शोभा तारागण ले आए ?
किसने फूल खिलाए ?

जली ग्रीष्म की जब ज्वालाए
धरती की छाती पर,
स्नेह, सलिल के लिए शुष्क
कंठो से जब कि उठे स्वर,
किसका था अनुराग कि बादल झूम झूम कर आए ?
किसने फूल खिलाए ?

सपने-से सुन्दर जीवन मे
सुरधनु-सी आशाए
क्षणभगुर जीवन मे भी
युग युग की अभिलाषाए ।
यह सब दे, किसने आखो से आँसू भी बरसाये ?
किसने फूल खिलाए ?
फूलो के कोमल अतर मे ये मधुकोष बसाए ?



बेटी कल्पना की मृत्यु पर

लडा हूँ जिन्दगी से अब चुनौती मृत्यु को दूँगा —
उठा लो यह सुरा का पात्र, इसमे जहर भर लाओ।

यही देखूँ कि कितनी तीव्र विष की जलन होती है,
कि कैसे मृत्यु मेरी आत्मा को भी डुबोती है
चिता की राख मे विश्वास की कलियाँ खिलाऊगा—
मेरे स्वप्न के ससार पर अगार बरसाओ।

लिखा था ज़िन्दगी का गीत उस दिन शक्ति से, श्रम से,
किया शृंगार था उस कल्पना का फूल, शबनम से,
लहू की धार से अब मृत्यु की तस्वीर खींचूंगा
मुझे तुम उस तबाही का, तिमिर का द्वार दिखलाओ।

बुझादो रोशनी मेरे सदन की ज्योति सब हर लो,
उठाओ आंधियां विध्वंस की, जो शेष हो कर लो,
जलाऊंगा प्रलय के घन तिमिर में प्राण का दीपक
मरण के ओ विनाशी दूत ! तुम अभिशाप बन आओ।
लहू की धार से अब मृत्यु की तस्वीर खींचूंगा



जन्म-जन्म का शुभ सपना

एक निमिष ही मधुमय अपने
जीवन का मुझको देकर
तुमने सत्य कर दिया मेरा
जन्म-जन्म का शुभ सपना ।

कहाँ कहाँ भटका हूँ, देखो,
कितना दर्द उठाया है ।
कितनी मन की गहन व्यथाओं को
जीवन मे गाया है ।

क्या अनन्त तृष्णा अधरो पर
रही उफनती है मेरे
आज कही मधु का यह क्षण
मुझ से मिलने को आया है ।

ऐसे मे लगता सारा जग
आज हुआ मेरा अपना ।
तुमने सत्य कर दिया मेरा
जन्म-जन्म का शुभ सपना ।

यह तो कहो, कहाँ थे इतनी देर ?
नही क्यो आए थे ?
ये मेरे जीवन मे इतने मेघ
कहाँ से छाए थे ?

कहाँ छिप गए थे जीवन की
सारी ज्योति चुराकर तुम ?
क्यो तुमने मुझको पीडा के
ये दुर्दिन दिखलाए थे ?

शायद सुख पाने से पहले
पडता है दुख मे तपना ।
तुमने सत्य कर दिया मेरा
जन्म जन्म का शुभ सपना ।



मेरी दुर्बलता

यह मैं नहीं, बहारें पीकर आई हैं
मैं तो इनके साथ झूमकर गाता हूँ ।
मेरी एक यही तो बस दुर्बलता है
पीता कोई और, बहक मैं जाता हूँ ।

ये बास ती पवन झूमता-मदमाता
कुसुमों के अधरों का मधु पी आया है,
ये महकी-महकी मंजरियाँ मधुवन्ती
जैसे आमों का यौवन गदराया है,

यह मदिरा तो इस वसन्त ने ढाली है
मैं तो लाली देख-देख मदमाता हूँ ।

इन सौ-सौ बलखाती लहरों को देखो
कहीं चाँदनी की मदिरा पी आई हैं,
जैसे अम्बर का मधु-कलश छलक आया
सारे जग पर बेहोशी सी छाई है,
यह दीवानों का काफिला चला जाता
मैं तो पीछे-पीछे धूल उड़ाता हूँ ।

सुख की मदिरा तो तुम पीकर आए हो
अपनी मस्ती मे मुझको पागल न कहो,
कही तुम्हारे मधु मे जहर न घुल जाए
इतने पास न आओ, थोड़ा दूर रहो,
मैं तो इस मस्ती के आलम मे अपने
एकाकीपन का कुछ दर्द भुलाता हूँ ।



प्यार

श्रीर परिभाषा नही कुछ,
सिफ ये है प्यार
चाँद छूने चला कोई
चुन लिये अगार ।

कसमसाकर उफनता-सा एक पारावार,
दर्द है इस पार जिसके, दर्द है उस पार,
आग अन्तर मे, अधर पर सिर्फ हाहाकार
चाँद छूने चला कोई

कल्पनाओं में खिले-से इन्द्रधनुषी रंग,
खोजती आकाश-कुसुमों को अधीर उमंग,
बीच में जिनके खड़ी है शून्य की दीवार
दर्द है इस पार

टूटता तारा, मगर ज्यों अग्नि की रेखा
जल रहा-सा ग्रन्थ, जिसमें प्राण का लेखा
कुछ नहीं है प्यार, लेकिन बहुत कुछ है प्यार
चाँद छूने चला कोई



ये सपनों की मधु-परियाँ

क्यो मेरी सूनी पलको पर
बिना निमत्रण उतरा करती
ये सपनो की मधु-परियाँ ?
क्यो मेरी वीरान जिन्दगी के
मरु मे खिल-खिल उठती है
ये मधुवन्ती मजरियाँ ?

अब तो बहुत दूर आया हूँ मैं बहार से, फूलो से,
कुछ भी तो मन पा न सका है उन अतीत की भूलो से,
फिर यह हठी पवन क्यो मेरे मन से उलझ रहा आकर ?
मुझको क्या सुख देने आई हैं तारो की फुलझडियाँ ?

तुझसे दूर नही रह सकता, पास न आने का प्रण है,
भूल नही पाता, पुकार पर पहरे, कैसी उलझन है ।
इस दुख से बरबाद जिन्दगी से अब दूर कहाँ जाऊँ
व्यर्थ बुलाती मुझको झिलमिल लहरो की ये किन्नरिया ।

तुमसे रूप मागकर लाई हैं लहरो की किन्नरियाँ,
तुमसे मधु की भिक्षा लेकर आई हैं ये मजरियाँ,
और तुम्हारे नीलम नयनो की परछाई ली नभ ने
मैंने भी तुमसे पाया है घायल मन, सूनी घडियाँ ।
अनिमन्त्रित क्यो उतरा करती
मेरी इन प्यासी पलको पर
ये सपनो की मधु परियाँ



स्वप्न-सदेसे

रोज रात की स्याही भर कर आँख मे
लिखता स्वप्न सदेसे तुमको प्यार के ।

तुमसे मिलना मन का बन्धन हो गया,
कुछ ऐसा मिल गया कि सब कुछ खो गया,
तुमने एक पुकार प्यार की क्या दे दी
मैंने तोड दिये बधन ससार के ।

तुमने प्राणों मे भर दी वह रागिनी
दिन बौराए, बेसुध है हर यामिनी,
अब मैं बाधा करता हूँ हर गीत मे
वे भटके-भटके से क्षण अभिसार के।

बोलो, कब खोलोगे अब यह अवगुण्ठन ?
कब बरसाओगे अँधियारे पर कचन ?
आओ मैं इस पार बुलाता हूँ तुमको
मेरे मनचाहे साथी उस पार के।

रोज रात की स्याही भरकर आँख मे
लिखता स्वप्न सदेसे तुमको प्यार के। •



एक दिशा से

एक दिशा से याद तुम्हारी आई
एक दिशा से आया है अँधियारा।

देखें कौन डुबाता है अब मन को
यह अँधियारा या मुस्कान तुम्हारी,
कौन पुकारेगा मेरे प्राणों को
यह सूनापन या पहचान तुम्हारी,
जो भी मुझे बाँध ले, सब स्वीकृत है
बहुत-बहुत मैं भटक भटक थक हारा।

तुम थे तब मावस भी पूनम ही थी
कुछ ऐसी थी प्राण ! तुम्हारी काया,
और आज भी मेरे तन मे, मन मे
बसी हुई है अचल तुम्हारी छाया,
इसीलिए सम्भव है इस छाया से
हो जाए यह अँधियारा उजियारा ।

किंतु काँपने लगा गगन अब देखो
कलियो की शबनमी आँख भर आई
गले लिपटती फूलो के, चौकी-सी
ठहर गई है सहमी-सी पुरवाई,—
ऐसे मे मेरा मन कहता, शायद,
तुमने मुझको फिर से कही पुकारा ।

एक दिशा से आई याद तुम्हारी
एक दिशा से आया है अँधियारा ।



वेदना शेष रह जाए

तुम आए, जैसे शून्य किसी के मन मे
सुख की भटकी-सी एक लहर उठ आए,
तुम आज गए, ऐसे जैसे जीवन से
सब चला जाय, वेदना शेष रह जाए।

यह प्रथम किरण-सा उजला-उजला जीवन।
यह जीवन की, सुख सपनो की अस्थिरता।
यह आशा की लहरो का उठ उठ आना,
यह लहरो की चचलता, क्षण-भगुरता।

इस धूप-छाँह मे भटका-भटका यह मन ।
जैसे आवारा बादल उडता जाए ।

पर तुम आते ही तो हो, जाते कब हो ?
अस्तित्व तुम्ही मे डूबा रह जाता है,
अनुभूति उसी पावन क्षण की यह जीवन
सुख-दुख के भिन्न स्वरो मे दुहराता है,

जैसे तुम ही हो तन भी, मेरा मन भी
मेरा सब कुछ अपने मे सदा समाए ।



एक दर्द का सागर

लाल लाल सध्या डूबी अनुराग भरी,
(तो) रेशम वाली रात आ गई आग भरी,
अब इस मन को और कहा ले जाऊँ मैं ?

मैं जो डूब रहा, मेरा अपराध नही,
तुमने क्यों यह लहर उठाई है, बोलो ?
मैं जो सुध बुध भूला, मेरा दोष नही,
तुमने क्यो आवाज लगाई है,बोलो ?
तुम जब चाँद बने हो, मुझे विवशता है
एक दद का सागर बन उफनाऊँ मैं ।
प्रिय ! इस मन को कहो कहाँ ले जाऊँ मैं ?

मदिर पवन ने अभी अभी सकेत किया
दूर कही से मधु वसन्त फिर आता है,
वह वसन्त जो बुझे हुए अन्तर मे भी
कुसुमो की अनुरागी अग्नि जगाता है,
चारो ओर घिरी आती मादकता की
ज्वाला से मन कब तक और बचाऊँ मैं ?
प्रिय। इस मन को कहाँ कहाँ ले जाऊँ मैं ?

मजरियो से महक उठ रही मदमाती
सृष्टि डूबती जाती सुरभि झकोरो मे,
यह यौवन उद्दाम उफनकर आया है
सागर की चचल वेमान हिलोरो मे,
मुझको इतनी कडी सज़ा तो तुम मत दो
एक दर्द का स्वर भी नही उठाऊँ मैं।
उफ। इस मन को और कहाँ ले जाऊँ मैं ?

लाल लाल सध्या डूबी अनुराग भरी
(तो) रेशम वाली रात आ गई आग भरी



हे माधव ! यह क्या कर डाला ?

तन मन प्राण जलाए देती
ये मंजरियों की मधु-ज्वाला,
हे माधव ! तुमने मेरे इस
सूने मन को क्या कर डाला ?

रिक्त हुआ बैठा हूँ अब तो
स्नेह लुटाकर सारा अपना,
मुझे कहाँ ले जाएगा अब
गई बहारों का शुभ-सपना ?

मेरी इस वीरान जिन्दगी पर
अब और न व्यंग करो तुम
मधु-सिंचन से भी न शांत होगा
मेरे उर का यह छाला।

इन वसन्त की भरी बहारों
से मुझको क्या रहा प्रयोजन ?
किसके हित पर पाऊँगा मैं
अब इतने सुख का अभिनन्दन ?
हे वसंत ! लौटा लो, अपने
मधु का दान न दो, पीने दो
मुझको अपने दुख की हाला।

ये झूमती बहारें, कोकिल के स्वर
मेरे पहचाने हैं
किंतु इन्हे क्या करूँ कि जब वे
आज बन गये अनजाने हैं ?
मुझे डूबने दो अतीत की
सुधियों के मधु-यामों मे ही
तुम क्या जानो गए जमाने मे
मैंने कितना मधु ढाला ?



मेरी 'कल्पना'

नील गगन के जगमग चाँद सितारो मे,
इन नभ-कुसुमो की बेभान कतारो मे
या इस मौन, भग्न वीणा के तारो मे
यही कही तो होगी मेरी कल्पना ।

जीवन मे सूनापन जैसे आ गया
अधकार का बादल मन पर छा गया,
सहसा यह क्या हुआ कि मेरे स्वप्न को
क्रूर काल का इगित मात्र मिटा गया,

विष की तीव्र हिलोर एक ही उठी कि लो
झुलस गई मेरी अमृतमय कामना ।

अभी गए क्षण की ही जैसे बात है
उतरी अरुण किरण थी, पर अब रात है,
अन्धकार, सुनसान, तबाही का आलम
मुरझाई हर कली, जला हर पात है,

उजडे हुए इ ही वीरान नज़ारो मे
कही भटकती होगी मेरी भावना।

किन्तु जहाँ भी कही किरन मुस्काती हो,
जहाँ मृत्यु के द्वार ज़िन्दगी गाती हो,
जहाँ अँधेरे की मातमपुरसी करने
अम्बर से चाँदनी उतर कर आती हो,

जहाँ प्रभाती गाये मगलमय स्वर मे
वही वही पर जागे मेरी कल्पना।



एक लहर

एक लहर तट से टकराई
आज किसी सुख सागर मे फिर दुख का ज्वार उफनता होगा

आज बहुत दिन बाद उदासी फिर मन मे घिरती आती है,
ऐसा लगता किसी दिये की बाती आज बुझी जाती है,
सुन पडती है एक दर्द की चीख मुझे हर एक कंठ से
आज कही कोई कवि अपने गीतो पर सिर धुनता होगा।

स्वप्न सभी की आँखो मे सुख के कुछ क्षण लेकर आते हैं,
लेकिन सपने ही तो हैं, बनते-बनते मिटते जाते है
एक अजीब चुभन सी मेरे तन-मन को बेधे जाती है
कोई फूलो का मारा होगा, अब काटे चुनता होगा ।

लेकिन तुम निराश होकर यूँ मेरे पास न बैठो आकर,
आने वाले क्षण को देखो जो कुछ बीता उसे भुला कर,
देखो अब भी सारी शक्ति लगाकर मैं अपने प्राणो की
गाता हूँ कि दूर रह कर भी कोई सब कुछ सुनता होगा ।



ऐसे नहीं हँसो

ऐसे नही हँसो
मन का अचल हिमाचल जिससे कांप कांप ढह जाए,
प्रिय ! तुम ऐसे नही हँसो ।
वह बंधन न कसो
मेरा जनम जनम जिस बंधन मे बन्दी बन जाए
प्रिय ! तुम वह बन्धन न कसो ।

यह प्रभात का कंचन, कुंकुम,
कलियों पर किरणों का रेशम,
दसो दिशाओ मे गुंजित यह
धरती के जीवन का सरगम ।
ऐसा न हो कही यह सब कुछ

प्राण ! तुम्हारे रजत-हास्य की रेखा मे सिमटाएँ,
इतना मोहक नही हँसो।

कुछ सुरधनु-से सपने मेरे,
मेरे मन का अम्बर घेरे,
कुछ बादल सी सजल कल्पना
भी खिल उठती साँझ-सवेरे,

ऐसा न हो तुम्हे पाऊँ तो
प्राण ! तुम्हारे दग्ध स्पर्श से यह सब कुछ उड जाए,
ऐसे मन मे नही बसो।

हँसो, किन्तु वेभान न कर दो,
बधन कसो, मुक्त भी कर दो,
मेरा दीप रखो, फिर अपने स्नेह

ज्योति से आमुख भर दो,
मुझको तुम ऐसे अपनाओ
छन्द तुम्हारा हो जाए, पर, स्वर मेरा उफनाए,
वीणा ऐसी आज कसो।

प्रिय ! मेरे मन के बादल से
अमृत बन बरसो। •

राग-विराग

भू से नभ तक छाया जाने कैसा राग-विराग ।

किस कुहेलिका मे सपनो की बन्दी हुई दिशाएँ !
जाने किस निगूढ से उठती आज अग्नि रेखाएँ !
बरस रहा ऐसा मधु जिसमे आग लगी-सी दिखती
राख बिछी भू पर, अम्बर से झरता सुमन-पराग ।

इस माया मे डूब रहा मन, मन का हाहाकार,
और धूप-सा जलता मन का यह चदनिया प्यार,
किन्तु अवश आत्मा की वीणा खिचे हुए तारो पर
खोई सी गाये जाती है बरबस दीपक-राग ।

बांध रहा हूँ जिन भावो को, घुलते ही जाते हैं
रिक्त हृदय के चषक हुए, पर ढुलते ही जाते हैं,
आज मुझे ही छल कर मेरा मौन पुकार लगाना
बंधन तोड रहा हो जैसे उच्छृंखल अनुराग।

क्या कह कर मन को समझाऊँ सीमा टूट रही है,
बाहें कहाँ बढाऊँ, छाया पीछे छूट रही है,
आज न जाने किस अदृश्य ने जादू-सा कर डाला
सपनो से जलता मन, जागृति मे भी लगती आग।

भू से नभ तक छाया
जाने कैसा राग-विराग।



छाया हाथ नहीं आती

मेरा मन तो हरिण हुआ
तुम गंध हुए जो भटकाती,
खोज रहा हूँ दिशा-दिशा, पर
छाया हाथ नहीं आती।

कल तक तुम मेरे प्राणों पर मूर्त्त सत्य-से छाए थे,
मन की देहरी पर तुमने ही शत शत दीप जलाये थे,
जब से उन मधुवन्त क्षणों को लेकर तुम हो चले गये—
सच मानो बहार की कोई लहर नहीं मुझ तक आती।

इतने अशरीरी होकर तुम फिर क्यों मुझ तक आते हो ?
इस मरुस्थल की तृष्णा को क्यूं आशा वन भटकाते हो ?
तुम जो सपने तिरा रहे हो मेरी डूबी पलकों पर
सच मानो उनसे अधरों की अनबुझ प्यास नहीं जाती ।

बोलो, यह कैसे रूठे हो, रोते और रुलाते हो,
मेरी वीणा के तारों पर अपना दद बजाते हो,
फिर तुमने अपने ही हाथों क्यूं ये रेखाएँ खींची ?
मेरी और तुम्हारी बाहें जिनको मेट नहीं पातीं ।

मेरा मन तो हिरण हुआ
तुम गंध हुए जो भटकाती,
खोज रहा हूँ दिशा दिशा, पर
छाया हाथ नहीं आती ।



पाखो से

भोर की किरणें तुझे आई जगाने
बांध कर मत बैठ पांखो की उडानें
नीड से बाहर खुला आकाश भी तो देख !

बहुत देखे स्वप्न सुख के नीड मे हैं
इस परिधि मे जिन्दगी सारी बिता दी,
बिजलियो से तो बचा तू, किन्तु तूने
आग जो थी जिन्दगी मे वह बुझादी,
कौन सा भय है तुझे ? पर तोल, उड चल
नीड से बाहर खुला आकाश भी तो देख !

एक किरण ऐसी आई

आज किसी चंदा-नगरी से
एक किरण ऐसी आई,
बहुत दिनों से बुझे दीप की
बाती तनिक उभर आई।

ऐसा लगा कि कोई सपना फिर से पलकों पर उतरा
जैसे कोई मेघ किसी पर्वत का शीष चूमता हो,
कुछ ऐसा अनुराग उमड़ कर अन्तर के तल से आया

बहती धारा

सुख दुख के दो कूल, और मेरा मन बहती धारा,
दोनों झुके हुए, पर, कोई छूता नही किनारा।

जाने क्या हो गया
कि चचल मनवा हुआ विरागी,
जाने किस अनजान पिया से
इसे लगन है लागी,
जैसे धारा आँख मूँद कर
सागर की धुन गाए,

बाँह उठाकर बढ़े किनारा
धारा बढ़ती जाए,
वैसे ही इस मोह भरी दुनिया से
बाँह छुड़ा कर
मनवा भागे तोड़ स्नेह की
और घृणा की कारा ।
दुख सुख के दो कूल, और
मेरा मन बहती धारा ।

रंग बिरंगे फूल खिलाकर
धारा को ललचाए,
कूल बहुत झुंझलाए, लेकिन,
धारा हाथ न आए,
इसी तरह आशा का सौरभ
औ', सपनों की कलियाँ,
जग बिखराए लेकिन मनवा
भूल गया रंगरलियाँ,
भरी जवानी में जोगी सा
मन न रुके, बढ़ जाए
पीछे पीछे भागे जग का
अँधियारा, उजियारा ।
सुख दुख के दो कूल, और
मेरा मन बहती धारा,
दोनों झुके हुए, पर,
कोई छूता नहीं किनारा । •

जिन्दगी आग है कि पानी है ?

कभी अगार बन के जलती है,
कभी आखो की राह ढलती है,
जिन्दगी आग है कि पानी है ?
हर घडी रग जो बदलती है ?



जाने क्या क्या सपन दिखाती है ।
कैसी कैसी लहर उठाती है ।
जि दगी तृप्ति है ? पिपासा है ?
बुझती जाती है, बढती जाती है ।



बाँह उठाकर बढे किनारा
धारा बढती जाए,
वैसे ही इस मोह भरी दुनिया से
बाँह छुडा कर
मनवा भागे तोड स्नेह की
और घृणा की कारा।
दुख सुख के दो कूल, और
मेरा मन बहती धारा।

रग बिरगे फूल खिलाकर
धारा को ललचाए,
कूल बहुत झुंझलाए, लेकिन,
धारा हाथ न आए,
इसी तरह आशा का सौरभ
औ', सपनो की कलियाँ,
जग बिखराए लेकिन मनवा
भूल गया रगरलियाँ,
भरी जवानी मे जोगी सा
मन न रुके, बढ जाए
पीछे पीछे भागे जग का
अधियारा, उजियारा।
सुख दुख के दो कूल, और
मेरा मन बहती धारा,
दोनो छूटे हुए पर,
कोई छुआ नहीं किनारा। •

बाँह उठाकर बढ़े किनारा
धारा बढ़ती जाए
वैसे ही इस मोह भरी दुनिया से
बाँह छुड़ा कर
मनवा भागे तोड़ स्नेह की
और घृणा की कारा ।
दुख सुख के दो कूल, और
मेरा मन बहती धारा ।

रंग बिरंगे फूल खिलाकर
धारा को ललचाए,
कूल बहुत झुंझलाए, लेकिन,
धारा हाथ न आए,
इसी तरह आशा का सौरभ
औ', सपनों की कलियाँ,
जग बिखराए लेकिन मनवा
भूल गया रंगरलियाँ,
भरी जवानी में जोगी का
मन न रमे, बढ़ जाए
पीछे पीछे भागे जग का
अंधियारा, उजियारा ।
सुख दुख के दो कूल,
मेरा मन बहती धारा
दोनों कूलें छूता पर,
कोई छूता नहीं है ॥

चाँदनी बन के झिलमिलाती है,
जाने किस चाँद को बुलाती है ?
जि दगी प्यार है, कि पीड़ा है
रोते रोते भी मुस्कराती है ।

•

कभी बादल-सी घुमड आती है,
और बू दो सी बिखर जाती है,
जिन्दगी सत्य है, कि सपना है ?
बनते-बनते ही बिगड़ जाती है ।

•

दद [illegible] [illegible]ती है,
[illegible] का सो[illegible] बुझा जाती है,
[illegible]दगी वक्त की रवानी है
बहती जाती है, बहती जाती है ।

•

घाव जितने भी हो, हिम्मत से सहे जाती है,
दास्ता दर्द की हँस हँस के कहे जाती है,
जिन्दगी वक्त की गर्दिश को, जमाने भर को,
अपनी हस्ती से चुनौती-सी दिये जाती है ।

भूचालों का कंपन जीवन का स्वर है
ज्वालामुखियों के अंगारे गाते हैं,
तूफानों का देश ज़िंदगी का घर है,
पवन-झकोरे जीवन लेकर आते हैं,
चंदा सूरज की किरणों से उतर-उतर
जीवन भू को अपने अंग लगाता है।
जीवन गाता है।

कवि अधरों पर जीवन-गीत बसाता है
गीतों से खिंच-खिंच आती हैं आत्माएँ,
जीवन कभी हँसाता, कभी रुलाता है,
कभी उठाता, कभी मिटाता आशाएँ,
इस निर्माण-नाश के स्वप्निल पंखों पर
देखो देखो जीवन उड़ता जाता है।

जीवन गाता है
प्राण-बंसरी पर श्वासों के स्वर लहराता है।



प्यास का गीत

[illegible] का सुख और कभी का और कभा
मेरी जनम-जनम की प्यास उधार है।

सुख [illegible] जिसमें [illegible] है
जिसके बल मुस्काता जाता है जीवन,
[illegible]
[illegible]

ऐसे ही सुख और कभी [illegible]
मेरी जनम जनम की प्यास उधार है।

[illegible]

बहुत सहा है मैंने, जब तक रह
सहने की भी आखिर सीमा होती है
अब केवल पीता हूँ, इतना होश किसे ?
पार लगाती मदिरा या कि डुबोती है,

अपनी चिन्ता करो जहर से बचे रहो
मेरा तो जीवन ही विष की धार है।

पीने वाले तो तुमने देखे होंगे
मिला नहीं होगा लेकिन मुझसा प्यासा,
घेरे रही पिपासा ही जिसको केवल
दूर दूर ही रही तृप्ति की हर आशा,

मेरे प्याले में जो कुछ भी ढल जाए
मधु हो या कि जहर सभी स्वीकार है।

तुम क्या मेरे जीवन की बरबादी पर
मगरमच्छ के आँसू आज बहाते हो ?
मुझे पता है हर मजबूर अभागे को
तुम सबसे पहले ही जो ठुकराते हो,

तुम अपने अपने सुख की मंजिल देखो
मुझको अपनी बरबादी से प्यार है

मेरी जनम जनम की प्यास उधार है
पीने दो कुछ और अभी
मत शोर करो। •

अब न रोकेगा तुम्हारी राह कोई
अब न जागेगी विगत की याद सोई
अब नहीं तुमको पुकारूँगा गगन में
अब न खोजूँगा तुम्हें अपनी जलन में
तुम्हारे शान्ति के पथ से अलग हो
जा रहा हूँ
दूर बेहद दूर

चाँद से कहना कि वह अब मर गया है
एक वह भी घाव था जो भर गया है
प्यार से कहना कि दीपक बुझ गया है
एक वह भी दाग था जो पुछ गया है
आज मैं अपराध अपने, दोष अपने,
सब समेटे
जा रहा हूँ
दूर बेहद दूर



आने वाला क्षण अतीत की गाथा नही कहेगा,
पर उपकार तुम्हारा इस क्षण का तो साथ रहेगा,
नया जन्म दूँगा सपनो को, नये गीत गाऊंगा,
मथ दूंगा आकाश और कल नया चाँद लाऊंगा,
कल जीवन की यात्रा पर मैं बहुत दूर पहुँचूंगा
आओ, आज तुम्हारा आंचल अंतिम बार भिगोलू ।

प्यार नही है पाप, किन्तु तुम भूल गए परिभाषा,
और जहर बन गया मौन का मेरा दोष जरा सा,
किन्तु यही भटकन जीवन है, यही अतृप्ति चिरन्तन,
आने दो, कल के क्षण को भी दूंगा मैं अभिनदन,
नयी कल्पना के अमृत से रिक्त प्राण भर लूंगा
आज तुम्हारे चरणो मे मन का सब मधुरस ढोलू ।
कल मेरी जलती आँखो पर
नये क्षितिज उतरेंगे ।

